भारत एवं दक्षिणी पूर्वी एशिया से सांस्कृतिक सम्बन्ध

डॉ. दिनेश कुमार गौतम*

दक्षिणी पूर्वी एशिया जिसके अन्तर्गत बर्मा स्थाम, कम्बोडिया, वियतनाम, इण्डोनेशिया आदि आधुनिक देशों की गणना की जाती है। हिन्दू राज्यों की स्थापना तथा भारतीय सभ्यता व संस्कृति का प्रसरण हमारे देश के इतिहास का स्वर्णिम परिच्छेद है। द0पू0 एशिया के (बर्मा, मलाया, वियतनाम, लाओस, कम्बोडिया, जावा, सुमात्रा, बोर्नियों) विभिन्न देशों से प्राप्त उत्कीर्ण लेखों व साहित्यिक साधनो के द्वारा ईसा की द्वितीय शती से पन्द्रहवी शती तक की अवधि में इनमें हिन्दू आपनिवेशिक राज्यों की स्थाना के प्रमाण उपलब्ध होते है।

विद्वानो के अनुसार प्राकृतिक निधियों व नवीन बाजारों की खोज में भारत के दुःसाहसी व्यापारी भारतीय संस्कृति व सभ्यता को लेकर जब द0पू0 एशिया पहुंचे तब तक वहां के लोग सांस्कृति विकास की उत्तर पाषाण कालीन अवस्था में ही थे। भारतीय प्रभाव के फलस्वरूप वहां एक प्रकार की क्रान्ति का सूत्रपात्र हुआ तथा शीघ्र ही उत्तर पाषाण काल की जड़ता टूटी। इसके परिणाम स्वरूप द0पू0 एशिया के विभिन्न भाग कमरा नगरों, मंदिरों बाजारो व सशत सैनिक राज्यों की स्थापना हो उठे तथा जीवन को एक नयी दिषा मिली। जनता व ग्रामीणता नष्ट प्राय हो गयी तथा कोरे कागज पर लिखे हुए अंको की भांति भारतीय धर्म विश्वास भाषा रहन–सहन आदि द0 पू0 एशियाई जनता के प्रबुद्ध वर्ग में सरलता से प्रविष्ट हुए तथा शीघ्र ही इन उजाड व पिछड़े हुए देशों का भारतीयकरण हो गया।

दक्षिणी पूर्वी एशिया के समाज पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव इतना व्यापक रूप से पड़ा था कि वहा के समाज व भारतीय समाज में कोई विशेष अंतर नहीं पारिलाक्षित होता है। औपनिवेशिक राज्यों में शासन पद्धति, न्याय तथा राजकीय नियमों के आदर्श भारतीय थे। राजा सर्वोच्च पदाधिकारी था। जावा के 'इन्द्रलोक' व 'नीतिप्रिय' नामक ग्रंथो से ज्ञात होता है कि वहा सम्राट निरंकुश व स्वेच्छाचारी होता था। उक्त पुस्तकों में राजा के कर्तव्याकर्तव्य का विवेचन महाभारत व रामायण की कथाओं के माध्यम से किया गया है। ये ग्रंथ मनुस्मृति से प्रभावित प्रतीत होते है। भारतीय आदर्शो के अनुसार यहां भी देवत्य में राजत्व की कल्पना

***(पूर्व प्रवक्ता) उ0प्र0रा0ट0मु0वि0 इलाहाबाद**

की गयी थी। चम्पा के डोग–डुआंग नामक स्थान से प्राप्त लेख में सम्राट को पृथ्वी पर निवास करने वाला देवता कहा गया है। राजा का उत्तराधिकारी उसका ज्येष्ठ पुत्र होता था। सम्राट की शासन में सहायता के लिये सचिव होते थे। उच्च राजकर्मचारियों को जागीरें दी जाती थी। चम्पा के अमरावती, विजय व पाडुरंग नामक प्रांतों में पदाधिकारियों को वेतन के स्थान पर जागीरे दी जाती थी। इसके अतिरिक्त राजा ही सर्वोच्च न्यायधीश होता था। भारतवर्ष की भांति ही जावा में न्यायाधीश को धर्माधिकरण कहा जाता था। भारतवर्ष के समान ही यहा की चार प्रकार की सेनाओं में (पैदल, हाथी, घुड़सवार व नौसेना) सेना का अत्याधिक महत्व था। दक्षिणी पूर्वी एषिया के हिन्दू औपनिवोरी राज्यों में हिन्दू रीति प्रथाओं एंव सामाजिक नियमों का प्रचार था। यहां का पारिवारिक जीवन भारतीय परिवार जैसा ही था। कुटुम्ब में वृद्ध को आदर की दृष्टि से देखा जाता था। भारतीय वर्ण व्यवस्था का आस्तित्व द0पू0 एशिया के शिलालेखों में प्रस्तुत चतुर्वर्ण शब्द से स्वतः सिद्ध हो जाता है। कम्बुज के कुछ अभिलेखों में चतुआर शब्द का प्रयोग भी संम्भवतः इसी तथ्य की ओर इंगित करता है। भारत के समान ही वहां भी ब्राम्हण व क्षत्रिय अधिक समादृत थें। समाज में ब्राम्हणों को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था। चम्पा के एक शिलालेख में ब्राम्हण को देवतुल्य कहा जाता है। अध्ययन व अध्यापन उनका प्रमुख कार्य था। भारतवर्ष की भांति यहा के समाज में भी अर्न्तजातीय विवाह होते थे। चम्पा में ब्राम्हणों और क्षत्रियों के मध्य अनेक विवाहो के परिणाम स्वरूप एक नवीन जाति ब्रह्मक्षत्रिय का प्रादुर्भाव हो गया था। भारत ने भी ब्रह्मक्षत्रिय जाति विद्यमान थी।

द0पू0 एशिया में नारियों की स्थिति वैदिक युगीन भारतीय नारियों जैसी थी। पर्दाप्रथा का प्रचलन नहीं था, उनकी सामाजिक व राजनैतिक स्थिति अच्छी थी। पति के वरणमेवे स्वाधीन थी। पति की मृत्योपरान्त सती प्रथा के प्रचलन में प्रमाण भी उपलब्ध होते है। शिलालेखों के अनुसार राजाओं के मर जाने पर उनकी रानियों व दासियों के सती हो जाने की सूचना प्राप्त होती है। जावा में पति की मृत्यु के अनन्तर स्त्रियों या तो छुरा भोंक कर मर जाती थी या फिर पति के शव के साथ जल जाती थी। डॉ0 बैजनाथ पुरी के अनुसार दू0पू0 एशिया में जहां सती प्रथा का प्रचलन था, वहीं विधवा विवाह की परम्परा भी थी।

मूर्तियों व भित्तिचित्रों के माध्यम से दू0पू0 एशिया के लोगों की वेशभूषा का ज्ञान प्राप्त होता है। इनका अधोवस्त्र प्रायः घुटने तक लटकता रहता था। साधु व मृत्य वर्ग लंगोटी धारण करता था। भारतवर्ष की भांति स्त्रियों के आभूषणों में कंगन, कर्णपुर, करधन, पायल तथा हार आदि का प्रमुख स्थान था। नष्त्य, गायन एवं नाटक मनो विनोद के प्रमुख सांधन था। जुआ विशेष रूप से प्रचलित

था। साधारण वर्ग के लोग मुर्गे लड़ाते थ। द0पू0 एशिया में मृतकों का अन्त्येष्ठि संस्कार चार प्रकार से किया जाता था। वाह क्रिया जल प्रवाह, समाधि व शव को निर्जन स्थान पर छोड़ देना जहां उसे पशु–पक्षी खा जाते थे। शव को जलाने का विशेष प्रचार था। दिन क्रिया के पश्चात् अवशेष भस्म को नदी में प्रवाहित कर दिया जाता था।

द0पू0 एशिया में भारतीय संस्कृति के प्रसार का एक सशक्त माध्यम संस्कृत भाषा व साहित्य था। द्वितीय या तृतीय शताब्दी से लेकर बारहवीं शताब्दी के समय तक यहां से उपलब्ध अभिलेखों व साहित्य से उक्त तथ्य की पुष्टि होती हैं। कम्बोडिया, जावा सुमात्रा व बोर्निरवे से प्राप्त कुछ प्राचीन लेख संस्कृत भाषा में उत्तर्कीण है। इन संस्कृत अभिलेखों में पाणिनी के व्याकरण सम्बन्धी नियमों का पालन किया गया है। चम्पा व कम्बुज से प्राप्त गद्य एवं पद्य में अंकित अभिलेख द0पू0 एशिया में संस्कृत भाषा के व काव्य के अत्युत्तम उदाहरण के रूप में उल्लेखनीय है। संस्कृत चम्पा व कम्बुज की राजकाज की भाषा थी जावा की भाषा पर भी संस्कृत का प्रभाव था। चम्पा, कम्बोडिया और जावा में महाभारत और रामायण का पठन–पाठन विशेष रूप से होता था। यहां के शिलालेखों में सेतुबन्ध के रचयिता प्रवरसेन व सूर्यसतक के लेख मयूर का नामोल्लेख प्राप्त होता है। कम्बोडिया के प्रेरूप शिलालेख के चार श्लोक पर चार श्लोक की स्पष्ट छाव परिलाक्षित होती है। इन शिलालेखों मे मनुस्मृति नारदस्मृति, विशालाक्ष के नीतिशास्त्र, वात्सायन के कामसूत्र तथा सुश्रुत के चिकित्सा शास्त्र का उल्लेख मिलता है। जावा के काव्य नाटक एवं साहित्य की अन्य शाखायें भी भारतीय साहित्य से प्रभावित हुई है। इनमें यत्र तत्र भारतीय ग्रंथो से उद्घृत श्लोक भी मिलते है। महाभारत के अनुकरण पर यहां कुछ ग्रथों की रचना हुई जैसे अर्जुन विवाह, कृष्णयन, हरिवंश, भरतयुद्ध, स्मरदहन यहां के पौराणिक ग्रंथों में ब्रम्हाण्डपुराण प्रमुख है। कथावस्तु व शैली की दृष्टि से यह संस्कृत के मौखिक ग्रंथ का अनुकरण है।

इस प्रकार प्राचीन व मध्यकालीन जावा के साहित्य पर भारतीय छाप की गहनता व स्पष्टता के कारण ही उसे इण्डो जैवेनीज लिटरेचर कहा जाता है।

धर्मिकता के क्षेत्र में जैन धर्म के अतिरिक्त वस्तुतः अन्य सभी भारतीय धर्मो ने द0पू0 एशिया में भारतीय संस्कृति के प्रचार में प्रमुख भूमिका का निर्वाह किया था। यहां धार्मिक सहिष्णुता के साथ बौद्ध, वैष्णव व शैव धर्मावलम्बी अपने–अपने सम्प्रदायों का प्रचार कर रहे थे।

द0पू0 एशिया में बौद्ध धर्म के प्रसार की प्राचीनता के सम्बन्ध में यद्यपि निश्चययात्मक रूप से नहीं कहा जा सकता तथापि सर्वसाधारण कथन यह है कि बर्मा में बौद्ध धर्म का प्रवेश अशोक के प्रयत्नों के फलस्वरूप हुआ। लंका के बौद्ध ग्रंथ महावंश व दीपवंश के अनुसार अशोक ने सोंप व उत्तर नामक दो प्रचारकों

को सुवर्णभूमि भेजा था। कुछ विद्वान बोचन्ह शिलालेख के आधार पर चम्पा में तष्तीय शताब्दी में बौद्ध धर्म के अस्तित्व को सिद्ध करते है। वियतनाम (अन्नाम), थाईलैण्ड (स्याम), सुमात्रा तथा सिलीबोस से अमरावती शैली में प्राप्त बुद्ध मूतिर्यों के आधार पर ईसा की तृतीय, चतुर्थ शताब्दी से ही यहां इस धर्म के व्यापक प्रसार पर प्रकाश पड़ता है। कम्बुज में भी बौद्ध धर्म का प्रचार था। कश्मीर के राजकुमार गुणवर्मन् ने जावा में इस धर्म के प्रसार हेतु महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। सांतवी शताब्दी में इत्सिंग के आगमन के समय वहां के धार्मिक वातावरण पर बौद्ध धर्म का पर्याप्त प्रभाव था। द0पू0 के एशिया के प्रायः सभी देशों में सांतवी शताब्दी तक बौद्ध धर्म का प्रसार हो चुका था।

द0पू0 एशिया के हिंदू राज्यों की विशिष्टता यह थी कि यहा पर बौद्ध धर्म के अतिरिक्त ब्राम्हण धर्म का भी विशेष प्रचार था। कम्बुज के दो प्राचीनतम शिलालेख वैष्णव धर्म से सम्बन्धित है। सूर्यवर्मन द्वितीय ने अंकोरवाट के विशाल मंदिर में विष्णु मूर्ति की स्थापना की थी। चम्पा में विष्णु की उपासना पुरूषोत्तम, नारायण, गोविन्द, माधव व विक्रम आई नामों से की जाती थी। कृष्णावतार के विभिन्न कथाओं का भी प्रसार व प्रचार था। विष्णु के चतुर्भुजी रूप की यहां पूजा होती थी। जावा में अन्नतशायी विष्णु की भूर्ति प्राप्त हुई है। वहां के कई शिलालेखों में शेषशायी विष्णु का वर्णन मिलता है। चम्पा के अभिलेखो में पदम व श्री के नाम से लक्ष्मी जी का नामोल्लेख मिलता है। लक्ष्मी विष्णु की अर्धागिंनी व धनदेवी मानी जाती थी।

द0पू0 एशिया में प्रसारित भारतीय धर्मो में शैव धर्म अत्याधिक महत्वपूर्ण था। यह धर्म चम्पा का प्रमुख धर्म था। यहां के लेखों व साहित्य में शिव को सर्वश्रेष्ठ देवता माना गया है। चम्मा में माइसोन व पोनगर के मंदिरों से प्राप्त शिवमूर्तियों के ज्ञात होता है कि वे शिव के त्रिनेत्रयुक्त, त्रिशुलधारी, ताण्डव नृत्यकारी आदि रूपों से परिचित थे। लिंग स्थापना शैव धर्म का अत्यन्त पुण्य कार्य माना जाता था। शिव का संहारक रूप जावा, सुमात्रा व बोर्नियों में अधिक प्रचलित था। पार्वती, कार्तिकेय व गणेश की पूजा भी होती थी।

इस प्रकार भारतीय मूर्ति पूजा द0पू0 एशिया के समस्त राज्यों में प्रतिष्ठित हो चुकी थी। मंदिरों के निर्माण उनमें मूर्तियों की स्थापना, मंदिरों का प्रभूतवाना देना आदि वहां के धार्मिक कर्मकाण्ड का महत्वपूर्ण अंग था। यज्ञों के अनुष्ठान में लोगो का विश्वास था। वे सतयुग द्वापर व कलयुग में विश्वास करते थे। महाभारत, रामायण व पुराणों का नियमित रूप से पाठ होता था। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय संस्कृति ने धर्म के माध्यम से एशिया के सर्वांगीण जीवन को अप्लावित कर दिया था।

धर्म, भाषा और साहित्य के समान ही भारतीय कला ने द0पू0 एशिया को प्रभावित किया। डॉ0 आनन्द कुमार स्वामी के कथन के अनुसार दक्षिणी पूर्वी एशिया की कला का भारतीय काला का एक अंग माना जा सकता है। यहां के प्राचीन भवन या मूर्तियों से प्रतीत होता है कि मानो उनका निर्माण भारतीय कलाकारों ने ही किया हो। डाक्टर रमेश चन्द्र मजूमदार के अनुसार दक्षिण पूर्व एशिया की कला के प्रत्येक अंग पर भारतीय कला की छाप परिलाक्षित होती है। चम्पा कम्बोडिया व जावा के प्रारम्भिक मंदिर भारतीय देवालयों के आदर्शो पर ही निर्मित है। वे शुद्ध भारतीय कला के उदाहरण लगते हैं प्रेइकुक के मंदिर में देवगढ़ मंदिर के समान अनन्तशायी विष्णु की चतुर्भुजी मूर्ति प्राप्त होती है। यहां की कला पर भारतीय प्रभाव नगर–निर्माण वास्तुकला एवं मूर्तिकला पर दर्शनीय है।

दक्षिण पूर्व एशिया के नगर निर्माण में भारतीय दुर्ग पद्धति का अनुसरण किया गया। इस दृष्टि से कम्बुज की राजधानी अंकोरथैम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। यह नगर वर्गाकार था तथा प्रत्येक ओर से इसकी लंम्बाई 2 मील थी। नगर के चतुर्दिक 330 फीट चौड़ी एक परिखा थी, जिसको पार करने के लिये पांच पुल बनाये गये थे। जो कि नगर के पांच प्रधान द्वारों से मिलते थे। नगर को अनेक सरोवरों के भवन सोपानो से सुशोभित किया गया था।

द0पू0 एशिया की वास्तुकला में उपलब्धि के रूप में बौद्ध व हिंदू मंदिरों का उल्लेख किया जा सकता है। जावा में प्राप्त बोरोबुदुर का विशाल बौद्ध स्तूप कम्बुज में अंकोरवट का विष्णु मंदिर, चम्पा के माइसान व पो–नगर के मंदिर द0पू0 एशिया की वास्तुकला के सर्वोत्तम उदाहरण है। बोरोबुदुर का बौद्ध स्तूप संसार का विशालतम स्तूप है। जिसे संसार का आश्चर्य भी कहा जाता है। भारतीय कला के मर्मज्ञ डॉ0 आनन्द कुमार स्वामी इस स्थापत्य काल के क्षेत्र में अद्वितीय मानते थे। जकार्ता से 35 मील दूर आठवीं शताब्दी में निर्मित यह विशाल स्तूप केदू की पहाड़ी पर बड़े आश्चर्य जनक ढंग से बनाया गया है। इसमें वीथिकाओं में लगभग 1500 शिल्पकृतियां निर्मित है। इनमें जातक कथाओं, ललित विस्तर और दिव्यावदान आदि बौद्ध ग्रथों से विभिन्न दृश्यों को संकलित किया गया है। मजूमदार इसे संसार का आठवां आश्चर्य मानते है। डॉ वागेल के अनुसार कला की दृष्टि से बोराबुदुर अपनी मूर्तियों के लिये अमूल्य है। वस्तुतः अपनी विशालता, विविधता व भव्यता के कारण इस स्तूप को पत्थरों पर तराशा गया महाकाव्य कहां जाये तो कोई अत्युक्ति नहीं होगी।

अंकारेवट का मंदिर जिसका पता सर्वप्रथम 1860 ई0 में हेनरी मूहोट ने लगाया था। विश्वकला के इतिहास में दक्षिण पूर्व एशिया की एक आश्चर्य जनक देन है। यह मंदिर पूर्ण रूप से पत्थर निर्मित है। इसके चतुर्दिक एक उंची व लंबी

चहार दीवारी व गहरी खाई है। प्रदक्षिणामार्ग की दीवालों पर हिंदू धर्म की कथायें, आकृतियां द्वारा प्रदर्शित की गयी है। यह मंदिर शताब्दियों तक प्रकृति के रौद्र रूप का सामना करता हुआ भी अपने मौलिक स्वरूप को सुरक्षित किये हुए है। बोरोबुदुर व अंकारवट के अतिरिक्त वर्मा का आनन्द मंदिर, अंकोरथैम का बेयान मंदिर, चम्पा के माइसेन मंदिर व पूर्वी जावा के लाराजोगरम वर्ग के मंदिर भी उल्लेखनीय है। इस सभी पर भारतीय स्थापत्य की स्पष्ट छाप व प्रभाव दृष्टिगत होती है।

दक्षिणी पूर्व एशिया के प्रायः भागों से उत्कीर्ण शिल्प एवं मूर्ति के असंख्य उदाहरण प्राप्त होते है। चम्पा के डोंग, डुओंग से, बर्मा के पगान में बने आनन्द मंदिर से तथा कम्बुज व जावा से बुद्ध मूर्तियां प्राप्त हुई है। कम्बोडिया के रोमलोक तथा ताकियों नामक स्थानों से गौतम बुद्ध की जो प्रस्तर मूर्तियां प्राप्त हुई है। वह बनावट की दृष्टि से सारनाथ की बुद्ध प्रतिमा का स्मरण दिलाती है। बोरोबुदुर स्तूप की बौद्ध मूर्तियों इण्डो जावानीज कला का सुंदरतम कृतियां है। स्वतंत्र रूप से भी बुद्ध बोधिसत्व हारिति तारा व प्रज्ञापरमिता की मूर्तियां प्राप्त होती है। बोधिसत्व व प्रज्ञापरमिता की मूर्तियां जावा में भी प्राप्त हुई है।

बौद्ध मूर्तियों के अतिरिक्त ब्राम्हण धर्म से सम्बन्धित चतुर्भुजी विष्णु, अनन्तशायी विष्णु, त्रिशुलधारी शिव, लिंगेश्वर, चतुरायन ब्रम्हा, लक्ष्मी गणेश आदि की भी मूतियां यहां के देशो से प्राप्त हुई है। चम्पा के बियनहोआ स्थान से विष्णु की चतुर्भुजी मूर्ति तथा चम्पा के कम्बोडिया के मंदिरों से शेषशायी विष्णु की मूर्तियां प्राप्त हुई है। भारतीय प्रभाव की यहा की कला पर पूर्ण व स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। थाईलैण्ड व मलाया की प्रारम्भिक कालीन कुछ मूर्तियां तो भारतीय कलाकृति ही प्रतीत होती है।

संदभ ग्रन्थ :–

1. शिल्परत्न (कुमार), त्रिवेन्द्रम संस्कृत सिरीज 1922।
2. कुमार स्वामी, ए0के0, हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एण्ड इण्डोनेशियन आर्ट, लन्दन, 1927।
3. कुरेशी एम0एच0, ए0 गाइड टु राजगीर, दिल्ली 1939।
4. गांगुली, ओ0सी0, साउथ इण्डियन ब्रोन्जेज, लन्दन, 1915।
5. श्रीवास्तव, के0सी0, प्राचीन भारत का इतिहास इलाहाबाद1998।
6. शास्त्री एच.0के0 साउथ इण्डियन इमेजेज ऑफ गाइड एण्ड गॉडेजेज, मद्रास, 1916।